International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 08-05-2025, Accepted: 07-06-2025, Published: 23-06-2025
Volume 11, Issue 2, 2025, Page No. 67-69

भारत में श्रम परिदृश्य एवं महिलाएं: एक विश्लेषण

कविता चौधरी
हिन्दी विभाग, सहायक आचार्य, विद्या संबल योजना, राजकीय कन्या महाविद्यालय बायतु, बालोतरा, राजस्थान, भारत

सारांश
मनुष्य प्रकृति का अविभाज्य अंग है और सतत रूप से अन्योन्य क्रिया से संलग्न रहता है। मनुष्य अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु निरन्तर क्रियाशील रहता है। ब्रिटानिका कन्साइज एनसाइक्लोपीडिया में श्रम को उत्पादन की तीन साधनों में (पूंजी व भूमि) से एक प्रमुख साधन माना है। जो मानव द्वारा वस्तुओं और सेवाओं के निर्माण हेतु किए गये सभी शारीरिक एवं मानसिक प्रयासों का प्रतिफल है। हर तरह के श्रम में मनुष्य की शारीरिक, तंत्रकीय और बौद्धिक ऊर्जा खर्च होती है, और अपने श्रम से प्रकृति पर असर डालते हुए मनुष्य अपने आपको बदलता है, भौतिक तथा अस्तित्व संस्कृति को उत्पन्न करता है और अपने शारीरिक तथा आत्मिक क्षमताओं को बढ़ाता है। सदियों से महिलाएं आर्थिक क्रियाकलापों में किसी न किसी रूप में संलग्न रही है। भारत की जनगणना 2011 में कुल श्रमिक संख्या 481.7 लाख है जिसमें 331.9 लाख पुरुष श्रमिक तथा 149.9 लाख महिला श्रमिक है। मुख्यतः श्रमिक महिला ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है तथा कुल श्रमिक जनसंख्या में एक तिहाई पर श्रमिक महिला है। श्रमिक महिला ने सभी क्षेत्रों में अपने दर्ज करायी है। महिला के श्रम करने से परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने लगी तथा साथ ही समाज में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त होने लगा हैं। अब महिलाएं ग्रार्हस्थिक कार्य के अतिरिक्त वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास में भागीदार बन गई हैं।

मूल शब्दः प्राकृतिक असमानता, निम्न सामाजिक – आर्थिक स्थिति, परिवर्तित परिदृश्य

श्रम का शास्त्रीय अर्थ है, मनुष्य द्वारा अपने किसी विशेष प्रयोजन के लिए प्रकृति में किया जा रहा सचेत परिवर्तन। श्रम एक ऐसी सक्रियता हैं, जिसका उद्देश्य निश्चित सामाजिक उपयोगी (अथवा समाज द्वारा उपयुक्त) उत्पादों को पैदा करना है, जो भौतिक और आत्मिक, दोनों तरह के हो सकते हैं। श्रम मनुष्य की सक्रियता का प्रमुख और बुनियादी रूप है। श्रम के बिना मानव जाति का अस्तित्व संभव नहीं है। इसलिए श्रम को लोगों के जैविक जातिगत व्यवहार का एक विशिष्ट रूप कहा जा सकता है, जो उनकी उत्तरजीविता, अन्य जैविक जातियों पर विजय और प्रकृति की शक्तियों व संसाधनों का विवेक संगत उपयोग सुनिश्चित करता है। श्रम मनुष्य को रूपान्तरण तथा विकास की ओर ले जाता है। श्रम की उत्पत्ति और समाज के निर्माण के द्वारा ही मनुष्य के वानराभ पूर्वजों का मानवीकरण हुआ है। श्रम का उपयोग माल व सेवाओं के निर्माण में प्रयोग किया जाता हैं। श्रम उत्पादन का एक प्रमुख कारक है, एक देश की श्रम शक्ति का आकार अपने वयस्क आबादी के आकार के द्वारा निर्धारित किया जाता है सभी लोग मजदूरी के लिए अपने श्रम की पेशकश करने को तैयार है। दूसरे शब्दों में, श्रम मनुष्य की ऐसी उद्देश्यपूर्ण कार्यसाधक सक्रियता है जिसकी बदौलत वह प्रकृति की वस्तुओं को अपनी आवश्यकताओं की तुष्टि के योग्य बनाता है। हर तरह के श्रम में मनुष्य की शारीरिक, तंत्रकीय और बौद्धिक ऊर्जा खर्च होती है, और अपने श्रम से प्रकृति पर असर डालते हुए मनुष्य अपने आपको बदलता है, भौतिक तथा अस्तित्व संस्कृति को उत्पन्न करता है और अपने शारीरिक तथा आत्मिक क्षमताओं को बढ़ाता है। श्रम शब्द प्रायः दो अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। प्रथम व्यापक अर्थ में सभी प्रकार के कार्य स्तरीय भेदभाव के बिना श्रमिकों पारिश्रमिक प्रतिफल की प्राप्तियों से है। द्वितीय संकुचित अर्थ में, वह उन व्यक्तियों तक सीमित है जो किसी आदेश के अधीन कार्य करते है और बदले में उन्हें अपने श्रम का प्रतिफल नहीं मिलता है। सभी युगों और सभी प्रकार की संस्कृतियों में महिलाओं स्तर सदैव इस जैवकीय तथ्य पर निर्भर रहा है कि वह बच्चों को जन्म देने की संभावना रखतीं हैं। सामाजिक संगठन समाज में अपनी भूमिका व श्रम विभाजन के लिए वंश एवं लिंग के भौतिक वातावरण पर निर्भर रहते है। मानवशास्त्रीय एवं ऐतिहासिक साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि श्रम विभाजन के मापदण्ड लिंगों के अनुसार होते है। जिस महिलाओं का सम्पूर्ण योगदान होता है जो स्थानीय रीति–रिवाजों और परम्पराओं के अनुसार सुनिश्चित किया जाता है न कि महिलाओं की शारीरिक और मानसिक क्षमताओं के अनुसार, तथ्य यह है कि लैंगिक आधार पर श्रम विभाजन के पीछे कोई 'प्राकृतिक या जैविक असमानताएं नहीं बल्कि इसकी जड़ में कुछ विचारधारात्मक मान्यताएं होती है। इसलिए औरतों की शारीरिक रूप से कमजोर और भारी श्रम के लिए अनुपयुक्त माना जाता है। लेकिन किसी महिला की उसकी शारीरिक शक्ति एवं कोमलता उसे भारी कृषि सम्बन्ध कार्य या अन्य शारीरिक श्रम के कार्यों से मुक्ति नहीं देती। दूसरे शब्दों में, औरतों की मौजूदा अधीनता अपरिवर्तनीय जैविक असमानताओं से पैदा नहीं होती है बल्कि यह ऐसे सामाजिक – सांस्कृतिक मूल्यों, विचारधाराओं और संस्थाओं की देन है जो महिलाओं की वैचारिक तथा भौतिक अधीनता को सुनिश्चित करती हैं।

श्रम एवं महिलाएं

सदियों से महिलाएं आर्थिक क्रियाकलापों में किसी न किसी रूप में संलग्न रही है। आखेट व्यवस्था में महिलाएं शिकार करने नहीं जा सकती थी, तो घर के अनेक आर्थिक कार्य, यथा बाँस की चीजें बनाना, अनाज साफ करना इत्यादि कार्य महिलाएं किया करती थी। पशुपालन युग में पशु की देखभाल, कपड़ा बुनना आदि कार्यों में महिलाएं योगदान करती थी। कृषि युग में महिलाएं मिट्टी के बर्तन बनाना, टोकरियाँ बनाना इत्यादि कार्य करती थी। तत्पश्चात औद्योगिक क्रान्ति के प्रभाव से महिलाओं को घर से बाहर कार्य करने के अधिक अवसर मिलने तथा साथ ही मालिकों को महिला श्रम सस्ते दर पर उपलब्ध होने के कारण महिला श्रमिकों की मांग बढ़ गई। उन्नीसवीं सदी की समाप्ति के बाद सभी देशों श्रमजीवी वर्ग में महिलाओं का महत्व बढ़ता गया। इस सदी में महिलाओं से पत्थर की खानों तथा चाय के बगीचों में काम करवाया जाता था। जैसे–जैसे आर्थिक विकास होता गया (वैसे–वैसे महिलाओं की व्यवसायिक क्रिया–कलापों में विस्तार होता गया। शिक्षा वे प्रचार–प्रसार होने के कारण प्रशिक्षण युक्त व्यवसायों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ने लगी थी। जिसके

फलस्वरूप 1920 के बाद व्यवसायिक क्षेत्र में महिलाएं अपना स्थान बनाने लगी। द्वितीय विश्व युद्ध के कारण जीवन–यापन का खर्चा बढ़ा। केवल एक व्यक्ति की आय से सारे परिवार का भरण–पोषण नहीं हो पा रहा था। अतः मध्यमवर्गीय महिला श्रम–बाजार में आने लगी।[1]

भारत में ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत समाज सुधारकों के अथक प्रयत्नों से स्त्री शिक्षा का भी प्रसार हुआ। भारतीय शिक्षित स्त्री को अनेक ऐसे (टीचर, नर्स, डॉक्टर आदि) कार्य क्षेत्र दिखाई दिए, जहाँ सम्मानपूर्वक कार्य करके वह अपनी शिक्षा का उपयोग भी कर सकती थी और अर्थोपार्जन भी कर सकती थी। सैंकड़ों ऐसे कार्य थे जिनमें शिक्षित व्यक्ति ही आवश्यक था। विज्ञान, तकनीकी, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में हर दिन कर्मियों की आवश्यकता बढ़ रही थी। शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन के साथ परिवारों की परम्परागत सोच में भी परिवर्तन आ रहा था। पहले समाज में विधवा, परित्यक्त या अकेली स्त्री को ही काम करने की स्वतन्त्रता या छूट थी, जिससे वे आत्मनिर्वाह कर सके और अपने समय का भी सदुपयोग कर पाएं। लेकिन अब विवाहिता स्त्रियों के शिक्षित हो जाने पर और शिक्षिका, डॉक्टर, नर्स आदि पदों पर काम करने से परिवार वालों ने अपने सम्मान में वृद्धि होते देखी। अतः क्रमशः मध्यवर्गीय स्त्री के काम को स्वीकृति मिलने लगी। फिर भी लगभग अस्सी के दशक तक स्त्री के नौकरी करने पर अनेक परोक्ष अंकुश थे यथा, स्त्री जो काम करने जा रही हैं[2] –

- उस कार्य में सामाजिक स्वीकृति है या नहीं ? वह काम करने से परिवार का सम्मान तो अक्षुण्ण रहेगा।
- उस कार्य में हर समय पुरुषों के मध्य तो नहीं रहना पड़ेगा।
- वह कार्य विवाहिता स्त्री के पति की नौकरी के स्तर से बहुत ऊँचा तो नहीं है, अन्यथा पति हीन भावना से ग्रस्त हो सकता हैं।
- स्त्री काम भले ही कर लें, पर परिवार में गृहिणी के अपने सारे कर्त्तव्यों को निभाने–करने का तो उसे पर्याप्त समय मिल पाएगा आदि।

फिर भी, इन सारे कर्तव्यों और ऊहापोह के साथ–साथ भारतीय मध्यवर्गीय स्त्री ने हर कार्यक्षेत्र में अपनी पहचान बनाई है। विशेषतः बीसवीं सदी के अन्तिम दशक (1990) से स्त्रियों ने हर क्षेत्र में प्रगति की है। एक नए आत्मविश्वास के साथ भारतीय स्त्री ने हर काम को चुनौती के रूप में स्वीकार कर के अपनी असीमित क्षमता का परिचय दिया है। संस्थान प्रबन्धन, डॉक्टरी, इंजीनियरिंग, प्रशासन, वकालत, पुलिस, वायुसेना, सूचना प्रौद्योगिकी, ज्ञान–विज्ञान–साहित्य हर क्षेत्र में स्त्री बहुत सहजता से कार्य कर रही हैं। पुरुषों के अनुपात में स्त्री कर्मी कम है लेकिन उसकी उपस्थिति सर्वत्र अंकित है। विदेशों में भी अब भारतीय स्त्री की क्षमता और कार्य कुशलता स्वीकृत होने लगी है। बात केवल महिला उद्यमियों की नहीं है। जिस भी क्षेत्र में देखेंगे हर ओर स्त्री एक से एक नई भूमिका में अपने बलबूते पर नया सृजन कर रही है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में क्रान्तिकारी पहल के रूप में स्त्री घर से निकल कर बाहरी कार्य क्षेत्र में आ रही हैं। इसका कारण केवल परिवार की आर्थिक उन्नति करना मात्र नहीं था अपितु आर्थोपार्जन करके, अपनी क्षमता और सामर्थ्य को रचनात्मक और व्यावहारिक रूप देकर उन्हें असीमित सन्तोष भी मिलता है। जो उनके आत्मविश्वास को बढ़ाता है और स्त्री के व्यक्तित्व को एक स्वतंत्र पहचान भी प्रदान कर रहा हैं। समाज में आज भारतीय नारी शिक्षा और रोजगार की जिस राह पर आगे बढ़ रही है – उस राह को पीछे तो मोड़ा नहीं जा सकता। अतः पुरुष को स्त्री के साथ सहयोग देकर तालमेल बिठाना ही होगा। समाज और परिवार ने अपनी सुविधा के लिए स्त्री का नौकरी करना स्वीकार किया, तो अब स्त्री को पारस्परिक सहयोग मिलना ही चाहिए।[3]

वर्तमान समय में शिक्षा के प्रचार व वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण निषेध क्षेत्रों में भी महिलाओं ने अपनी उपस्थिति दर्ज करायी हैं। श्रीमति पद्मिनी सेन गुप्ता ने अपनी पुस्तक 'वीमेन वर्कर्स ऑफ इण्डिया' में करीब दस–बारह प्रकार के कार्यों की सूची का विवरण दिया हुआ है, जो निम्नांकित हैं[4]

- **कारखानाः** कारखाने में कार्यरत महिलाएं और विशेषकर कपड़े, तम्बाकू, चीनी मिल, आटा मिल, तेल के कारखाने तथा ऐसे अनेक कार्यों में बड़ी संख्या में महिलाएँ संलग्न हैं।

- **बगीचेः** चाय, कॉफी के बगीचों में महिलाएं काम करती हैं।

- **सार्वजनिक निर्माण विभागः** महिलाओं के श्रम का उपयोग नवीन रास्तों का निर्माण, नदी योजनाओं में बाँध के निर्माण में किया जाता है। गोद में नन्हा सा बच्चा और सिर पर रोटियों की पोटली लिए सौ रुपये – दौ सौ रुपये की मजदूरी प्राप्त करने के लिए जाती महिलाओं का दृश्य कही भी दिखाई पड़ जाता हैं।

- **खानः** अधिकांश महिलाएं पत्थर, कोयला, मैंगनीज आदि की खानों में कार्य करती है।

- **घरेलू कार्यः** भारत में औद्योगिक विकास की गति धीमी होने के कारण तथा कृषि पर अधिक दबाव होने के कारण अन्य विकसित देशों की तुलना में हमारे देश में घरेलू नौकर मिलते हैं। घरेलू कार्यों जैसे – रसोई कार्य, बच्चों की देखभाल इत्यादि में अधिकांशतः महिलाएं संलग्न होतीं हैं।

- **कृषि कार्यः** कृषि सम्बन्धी कार्य यथा–जुताई, खाद डालना, पानी देना, पशुओं की सेवा–पानी, डेयरी कार्य आदि महिलाएं करतीं हैं। मुख्यतः सब्जी तरकारी उगाने का कार्य महिलाओं का ही होता है।

- **यातायात, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य क्षेत्रः** इनसे सम्बन्धित क्षेत्रों में भी महिलाएं कार्य करती है। यथा परिचालिका, एयर होस्टेस, टेलीफोन ऑपरेटर, शिक्षिका, अधिकारी, प्रोफेसर, आचार्य, दाई, स्वास्थ्य निरीक्षक, डॉक्टर इत्यादि पदों पर महिलाएं संलग्न हैं।

- **लघु उद्योगोंः** लघु उद्योगों में महिलाओं की विशेष भागीदारी है। यथा–बीड़ी बनाना, रंगाई व छपाई का कार्य, खिलौने बनाने का काम, पापड़ तथा अचार बनाना ऐसे अनेक छोटे–छोटे व्यवसाय है जो घर पर किये जाते है तथा इनमें मुख्यतः महिलाएं कार्य करती हैं।

- **आधुनिक युगः** वर्तमान समय में भारत में महिला वकील, बैरिस्टर या न्यायाधीश भी दिखाई पड़तीं हैं। विदेश विभाग या भारतीय दूतावास में महिलाएं काम करतीं हैं। राष्ट्रपति, राज्यपाल, राजदूत, मंत्री पद जैसे राजनीतिक पदों के लिए महिलाओं को योग्य माना गया हैं।

वस्तुतः सदियों से महिलाएं पुरुष के विभिन्न कार्यों में सहयोग करती रही हैं। पहले घर की चार दिवारी के अन्दर घरेलू कार्य करती थी जबकि अब वो उसके व्यावसायिक कार्यों में भी समान रूप से संलग्न हैं। महिला के श्रम करने से परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने लगी तथा साथ ही समाज में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त होने लगा हैं। अब महिलाएं ग्रार्हस्थिक कार्य के अतिरिक्त वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास में भागीदार बन गई हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर श्रमिक महिलाओं ने घरेलू कार्यों के साथ–साथ कामकाजी व्यवसायिक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति को दर्शाया है। इन कार्यों में सभी वर्ग (निम्न मध्यम, उच्च) भी शिक्षित, अर्द्ध–शिक्षित, अशिक्षित तथा विवाहित व अविवाहित महिलाएं सम्मिलित है। घरेलू कार्य में केवल शारीरिक श्रम होता है। लेकिन कामकाजी कार्यों में शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक विभिन्न प्रकार के कार्य होते है। प्रारम्भ में जहाँ कामकाजी नारी को परिवार के लोगों के असहयोग का सामना करना पड़ा, किन्तु कालांतर में उनके कार्य से प्राप्त आय एवं सम्मान के कारण परिवार के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है। [5]

इसलिए महिलाओं के श्रम व उससे प्राप्त अर्थ से पुरुष के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है। वो महिलाओं के घरेलू कार्यों के साथ–साथ बाहरी कार्यों में काम करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे है। इसके पीछे मुख्यतः उनका आर्थिक लोभ ही क्यों ना हो, लेकिन महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आ रहा है। अतः अपनी बौद्धिक अथवा शारीरिक क्षमता के उपयोग से कुशल या अकुशल श्रम के माध्यम से घर में रहकर या घर के बाहर जाकर कार्य करके आर्थोपार्जन करने वाली महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति निरन्तर सुदृढ़ होती जा रही है जो उनकी समाज में गरिमामय स्तर के संकेत है।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा, रमा एवं मिश्रा, एम. के., महिला विकास, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 21।
2. गुप्ता, कमलेश कुमार, भारतीय महिलाएं शोषण, उत्पीड़न एवं अधिकार, बुक एनक्लेव, जयपुर, 2005, पृष्ठ 35
3. गोयल, डॉ. प्रीति प्रभा, भारतीय नारी विकास की ओर, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2009, पृष्ठ 98
4. यथोक्त, पृष्ठ 103
5. अग्रवाल, डॉ. रोहणी, हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिलाएं, पृष्ठ 56